ISSN : 0972-2351

सी एम एफ आर आइ विशेष प्रकाशन, संख्या 73

मत्स्यगंधा

2001

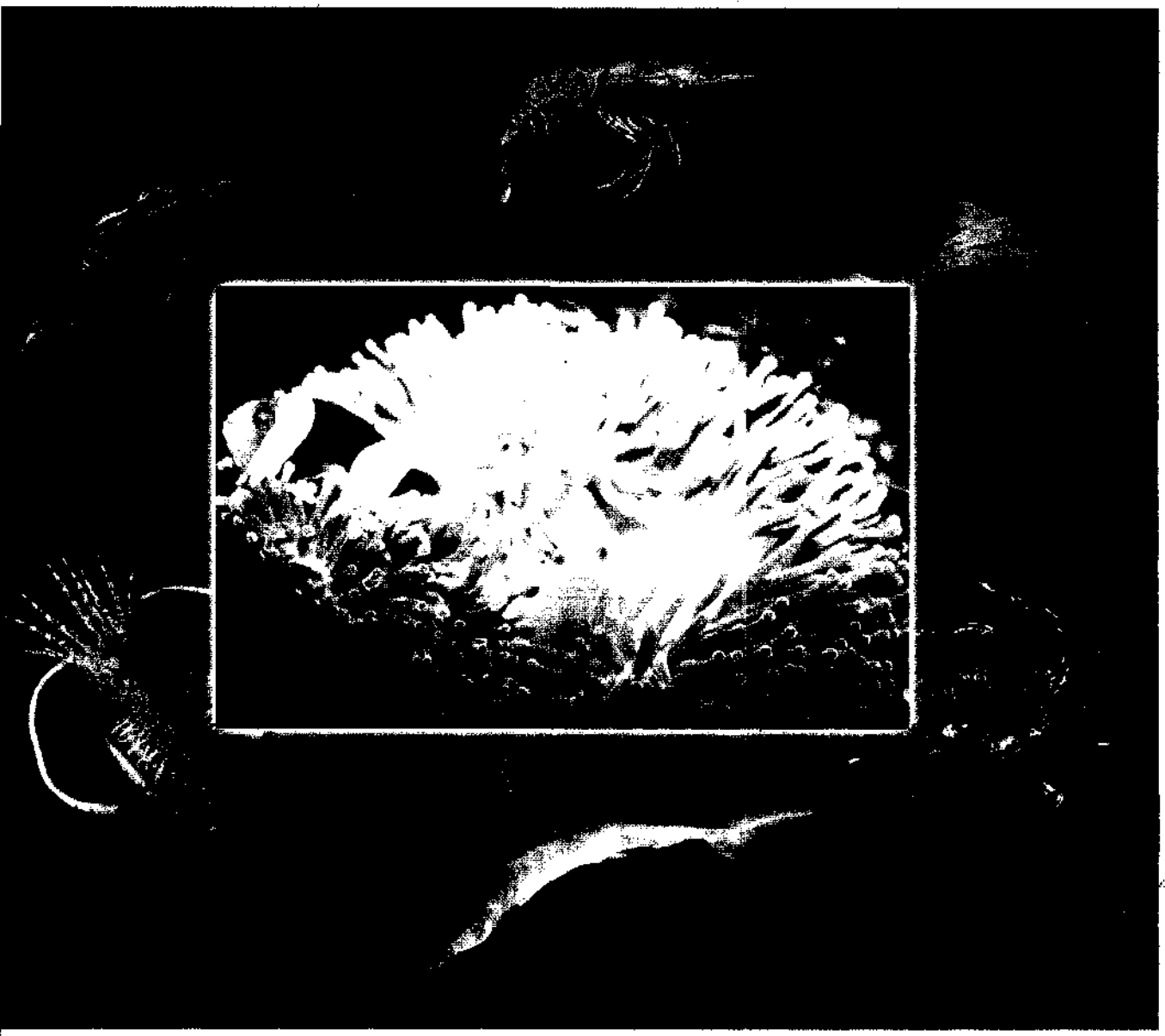

केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
डाक संख्या 1603, टाटापुरम डाक, कोचीन 682 014, भारत
सितंबर 2002

पर्यावरणीय प्रभाव निर्धारण

डॉ. वीरेन्द्र वीर सिंह
केंद्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान, मुंबई अनुसंधान केन्द्र, महाराष्ट्र

संपूर्ण विश्व के विकास हेतु की जा रही आधुनिक गतिविधियों तथा विश्व के तमाम हिस्सों में निरंतर बढ़ती हुई आबादी के कारण आज प्राकृतिक संसाधनों पर एक न एक रुक पाने वाला दबाव महसूस किया जा रहा है। भूमि, जल, लकड़ी, जीवजंतु मछलियाँ इत्यादि जैसे संसाधनों की माँग आज जिस प्रकार बढ़ रही है उसे देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि ये संसाधन आगे आने वाली पीढ़ियों को शायद ही उपलब्ध रह पाएँगे। वर्तमान परिदृश्य में सभी जातियों, वंर्गों एवं उनके प्राकृतिक वास तथा परितंत्र के उचित प्रबंधन की आवश्यकता है जिससे कि इनका उपयोग समझदारी पूर्वक किया जा सके।

आज की परिस्थिति में यह अत्यावश्यक हो गया है कि संसाधनों का दोहन इस प्रकार किया ज़ाए कि वे अपनी नवीनीकरण की क्षमता को जाग्रत रख सकें। संरक्षण पर आधारित प्रबंधन को सर्वोत्तम माना जाता है क्योंकि इसके द्वारा न केवल जैविक उत्पादकता क़ायम रहती है अपितु पुनः नवीनीकृत हो सकने वाले संसाधनों की दीर्घकालीन अन्तःशक्ति में भी वृद्धि होती है। अँग्रेज़ी भाषा में प्रयुक्त 'संरक्षण' शब्द का अधिकतम शासकीय प्रयोग इस शताब्दी के प्रारंभ में राष्ट्रपति थियोडोर रुजवेल्ट के प्रशासन ने संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में बहुतायत में करके इसे प्रचलित बना दिया तथा यह शब्द 'प्राकृतिक संसाधनों के समझदारी पूर्वक उपयोग' के लिए नियमित बोल-चाल में आ गया। इस शब्द का अन्य अर्थ 'संसाधनों की धारणीयता हेतु दोहन पर नियंत्रण' भी माना गया। इस पारंपरिक शब्द को आज 'धारणीय - वहनीय उपायों' के समकक्ष माना जाता है।

आधुनिक भाषा में 'धारणीय' शब्द का प्रयोग बृहद

औद्योगिक, घरेलु स्रोतों एवम् नगरपालिकाओं द्वारा मलजल का प्रवाह

परिप्रेक्ष्य में किया जाता है। प्रबंधन के दृष्टिकोण से संसाधनों की धारणीयता बनाए रखने के लिए उनका पुनः नवीनीकृत हो सकने वाला भाग ही उपयोग में लिए जाने के लिए दोहित किया जाता है। हम सब यह जानते है कि आज विकास एवं प्रबंधन हेतु कुछ उपकरणों या तरीक़ों का प्रयोग करना आवश्यक हो गया है और इन्हें हम प्रबंधन के "औज़ार " कहते हैं परंतु यह "स्क्रू ड्राइवर" या हथौड़ी जैसे पारंपरिक औज़ारों से पूर्णतः भिन्न, सुनियोजित एवं योजनाबद्ध तरीक़े होते हैं। धारणीय विकास हेतु पर्यावरण विद् तथा समाजविद् दो अत्यंत सशक्त तरीक़ों का प्रयोग करते है जिन्हें क्रमशः 'पर्यावरणीय प्रभाव निर्धारण' एवं 'सामाजिक प्रभाव निर्धारण' कहा जाता है।

हमें आज यह भलीभाँति ज्ञात हो चुका है कि किसी भी विकास रत कार्यक्रम को धारणीयता की कसौटी पर पूर्णतःखरा उतारने के लिए वैज्ञानिकों तथा समाज शास्त्रियों को मिल कर काम करना आवश्यक है। आज नियोजकों

एवं सरकार की सहायता के लिए क्रमबद्ध तरीक़े जिनसे पर्यावरणीय प्रक्रियाओं एवं उनके उपलक्ष्यों को समझा जा सके पूर्णतः विकसित हो चुके हैं। आज के युग में इन तरीक़ों को हम काली घटा के बीच एक रुपहली रेखा के रुप में पाते हैं और आशा करते है कि इनके माध्यम से हम अबाधित विकास के दुष्परिणामों को कम करने मैं सफल होंगे।

आज यह सर्वविदित है कि प्रकृति में होने वाली पर्यावरणीय प्रक्रियाएँ अत्यंत उलझावपूर्ण होती हैं। इन प्रक्रियाओं से जनित समस्याएँ भी सदैव एक दूसरे से संबद्ध एवं संबंधित रहते हुए जटिल हो जाती हैं। ये समस्याएँ राजनीतिक सीमाओं से नियंत्रित नहीं होती हैं तथा इनका प्रभाव सर्वव्यापी होता है। यहाँ पर इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि समुद्रीय पर्यावरण की समस्याएं अत्याधिक पेचीदा होती है क्यों कि समुद्री पारिस्थितिकी पर अन्य महासागरों, विशेष तटीय प्रक्षेत्रों एवं उनसे संबद्ध मृदुजल तंत्रों का परोक्ष प्रभाव पड़ता है। इस आलेख में हम समुद्री परिस्थितिकी के संदर्भ में पर्यावरणीय प्रभाग निर्धारण की चर्चा करेंगे।

विश्व की संपूर्ण आबादी का एक बहुत बड़ा हिस्सा संसाधनों की विपुलता के कारण समुद्र तटीय क्षेत्रों में निवास करता है तथा समुद्री व तटीय संसाधनों को दोहन करके लाभ प्राप्त करता है। तटीय प्रक्षेत्रों में रोज़गार के अवसर भी अधिक सुलभ रहते है क्योंकि सामुद्रिक गतिविधियों के अतिरिक्त पर्यटन तथा मनोरंजनात्मक अवसरों की यहाँ भरमार रहती है। परंतु एक बात जो विशेष ध्यान देते योग्य है वह यह कि इन क्षेत्रों में पर्यावरणीय प्रक्रियाएँ तथा परिस्थितिक तंत्र न केवल सामाजिक व आर्थिक ढाँचे को प्रभावित करते है अपितु सामाजिक व आर्थिक कारणों से की जाने वाली अनियंत्रित गतिविधियों के दुष्प्रभाव को भी दीर्घावधि तक स्वयं से समाहित करते रहते है।

समुद्र, तटवर्ती प्रक्षेत्रों और इनमें उपलब्ध संसाधनों के धारणीय उपयोग में सबसे महत्वपूर्ण रुकावटें - बढ़ती हुई आबादी का दबाव, उपलब्ध जगहों एवं संसाधनों की बढ़ती हुई माँग तथा उनके उपयोग के तरीक़े, विश्व के बड़े भूभाग में फैली ग़रीबी व कंगाली इत्यादि है।

तटवर्ती निर्माण कार्य

आगोल स्तर पर समुद्री एवं तटवर्ती क्षेत्रों की समस्याएँ एवं उनके कारणों में विगत कई दशकों में कोई विशेष परिवर्तन नहीं दृष्टिगोचर हुआ है। अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर समुद्री प्रदूषण की कुछ समस्याओं से मुक्ति पाने में व किन्हीं विशेष तटीय प्रक्षेत्रों की अवस्था में गुणात्मक सुधार लाने में किए गए प्रयासों का कुछ उल्लेखनीय असर हुआ है और मुंबई जैसे कुछ चुनिंदा स्थानों पर यह अधिक तीव्रता से अपना प्रभाव लगातार बढ़ाता जा रहा है।

पृष्ठ प्रदेशों की भूमि से उत्पन्न प्रदूषण समुद्री पर्यावरण के लिए सदैव चिंता का विषय रहा है परंतु तटीय एवं समुद्री पर्यावरण की विहंगमता को ध्यान में रखकर यहाँ हो सकने वाले नुकसान और चुनौतियों का लेखाजोखा एक अधिक सन्तुलित अनुदृश्य प्रस्तुत करने की क्षमता रखता है। आज जलवायु संबंधित दूरगामी वैश्विक प्रभावों के अतिरिक्त समुद्री तथा तटवर्ती क्षेत्रों की गुणवत्ता एवं उपयोग को प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में प्रभावित करने वाली भू - आधारित प्रमुख गतिविधियाँ निम्न प्रकार से है:

- प्राकृतिक वास एवम् पारिस्थितिक तंत्र का परिवर्तन एवम् विनाश।

- मानवीय स्वास्थ पर मलजल का प्रभाव।
- बडे पैमाने पर तीव्रता से अनुभव की जानेवाली हानिकारक पोषकों की अधिकता।
- मात्स्यिकी एवम् अन्य प्रमुख पुनरुज्जीवित हो सकने वाले मुख्य संसाधनों के स्रोत में गिरावट।
- जलीय प्रवाह में परिवर्तन से उत्पन्न तलछट के बहाव में परिवर्तन

उक्त वर्णित विशेष परिस्थितियों को ध्यान में रख कर यह अब नितान्त आवश्यक समझा जाने लगा है कि तटीय एवम् समुद्री क्षेत्रों को नियमित रूप से 'पर्यावरणीय प्रभाव निर्धारण' की प्रक्रिया के द्वारा आकलित किया जाए। व्यापक रूप से किये गये ये अध्ययन समान रूप से प्रबन्धकों, वैज्ञानिकों, नियोजकों एवम् नीति निर्धारकों के लिये उपयोगी रहते हैं। इनकी उपयोगिता के प्रमुख कारण निम्नप्रकार से हैः

- इन अध्ययनों के माध्यम से हमें समकालीन पर्यावरण की स्थिति, प्रवृत्ति एवम् गुणवत्ता के सम्बन्ध में जो जानकारी प्राप्त होती है वो प्रबन्धन हेतु अवश्यक रहती है।
- यह अध्ययन हमें वैज्ञानिक ज्ञान में मौजूद महत्वपूर्ण रिक्तियों का बोध कराते हैं जिससे कि आगे किये जाने वाले अन्वेषणों की दिशा एवम् प्राथमिकतायें निर्धारित करने हेतु प्रामाणित आधार प्राप्त होता है।
- इन अध्ययनों के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण हेतु किये जा रहे उपायों की कारगरता एवम् पर्याप्तता के सम्बन्ध में निर्णयात्मक जानकारी प्राप्त होती है जो कि इस सम्बन्ध में आवश्यक समायोजन हेतु मार्ग दर्शक रहती है।

पर्यावरणीय प्रभाव को निर्धारित करने के लिये किये गये किसी भी अध्ययन द्वारा हमें इस सम्बन्ध में उपलब्ध समस्त जानकारी का सार प्राप्त हो जाता है जिससे हम सम्बन्धित पर्यावरण खण्ड की विशेषता को ध्यान में रख कर निश्चित राय बना पाते है। इस प्रक्रिया द्वारा सर्वाधिक महत्वपूर्ण जानकारी प्राकृतिक लक्षणों में आये परिवर्तनों तथा उनके दूरगामी परिणामों के सम्बन्ध में रहती हैं। यहाँ पर इस बात का उल्लेख करना आवश्यक है कि समुद्री

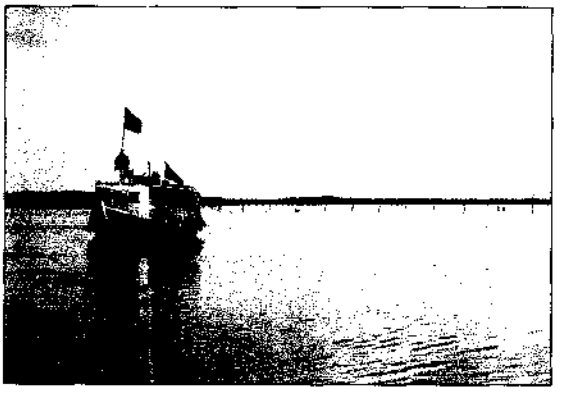

टूरिसम (पर्यटन) तथा मनोरंजनात्मक गतिविधियाँ

पर्यावरण के स्वरूप का निर्धारण एक अत्यंत दुष्कर कार्य है। सिध्दान्ततः समुद्री पर्यावरण के किसी भी घटक के बारे में मानदण्डो का विकास किया जा सकता है और सभी भौतिक, रासायनिक एवम् जैविक घटकों के लिये कसौटियाँ बनायी जा सकती हैं । इसके अतिरिक्त किसी भी विशेष क्षेत्र, कालावधि एवम् उपयोगों के अनुरूप भी मानकों का विकास किया जा सकता है।

पर्यावरणीय मानक या तो गुणात्मक - विवरणात्मक हो सकते है अथवा परिमाणात्मक। इसके अतिरिक्त दोनों प्रकारों को मिलाकर भी मानक निर्धारित किये जा सकते है। परिमाणात्मक मानकों को तुलनात्मक एवम् वैज्ञानिक पैमाने के अनुरूप ज्यादा सुविधाजनक ढंग से आवश्यकतानुसार ढाला जा सकता है। उदाहरण के तौर पर केन्द्रीय पर्यावरण मंत्रालय, पर्यावरण में पाये जाने वाले विभिन्न तत्वों की सांद्रता की सीमायें निर्धारित करता है अतः इन सीमाओं का अनुपालन कराना एकदम सीधा-साधा कार्य है। यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि पर्यावरण में विद्यमान जैविक रूपकों-जैसे-संरक्षण हेतु किसी विशेष परिस्थितिकी का

अनुपात निर्धारित, विशेष जाति अथवा प्रजाति का सम्पोषण, विशेष क्रियात्मक स्थिति को दर्शाने वाली खास प्रजातियों के सूचक इत्यादि मानकों का विकास एक अत्यावश्यक प्रक्रिया है।

समुद्री पर्यावरण की गुणवत्ता को दर्शाने वाला सर्वसामान्य मानक यह है कि किसी भी स्तर पर परिस्थिति में कोई परिवर्तन नही होना चाहिये, विशेष रूप से पर्यावरण का अपकर्ष दर्शाने वाले मानकों की मात्रा में बढ़ोतरी तो बिलकुल ही नहीं होनी चाहिये। रासायनिक सान्द्रता में वृध्दि, प्राणवायु की मात्रा में कमी तथा विषाक्त तत्वों को बढ़ाने वाली शैवाल का अचानक बढ़ना आदि परिस्थितियाँ अवांछनीय मानी जाती हैं और इनके बारे में पर्याप्त वैज्ञानिक जानकारी रखना अत्यावश्यक हो जाता है जिससे कि उपयुक्त

संदर्भात्मक मानक परिभाषित किये जा सकें। इन संदर्भात्मक मापदंडों को निश्चित करते समय प्राकृतिक परिवर्तनशीलता का ध्यान रखा जाता है।

समुद्री क्षेत्रों हेतु गुणवत्ता दर्शक मानकों का निर्धारण एक अत्यंन्त महत्वपूर्ण कार्य है क्योंकि इनके द्वारा ही हम उन मानवीय गतिविधियों का प्रबन्धन कर सकते है जिनके द्वारा क्षेत्र विशेष की उत्पादकता एवम् परिस्थितिकी प्रभावित होती है। सटीक तरीके से वर्णित मानक चाहे वो विवरणात्मक हो अथवा संख्यात्मक उचित प्रबन्धन हेतु मूलभूत आवश्यकता माने जाते हैं जिनके द्वारा किसी विशेष लक्ष्य को ध्यान में रख कर पर्यावरणीय आकडों का संग्रह करने में सहायता मिलती है। विशिष्ट लक्ष्यों का निर्धारण भी अत्यावश्यक माना जाता है क्योंकि प्रासंगिक तथा व्याख्येय आँकडों के आधार पर ही वैज्ञानिक अध्ययन की रूपरेखा बनायी जा सकती है। बहुधा पर्यावरणीय कानून भी मानको की व्याख्या तथा सीमांकन प्रदान करते हैं।

पर्यावरणीय प्रभाव निर्धारण के लिये भौगोलिक विशेषताओं व सीमाओं के साथ-साथ पर्यावरणीय वैशिष्य, पारिस्थितिकी एवम् मानवीय गतिविधियों की जानकारी बहुत महत्वपूर्ण होती है। इन सभी की व्याख्या, प्रक्रिया प्रारम्भ करने के समय ही की जाती है। इसके पश्चात निर्धारण क्षेत्र में होने वाली और सामुद्रिक पर्यावरण को बदल सकने में सक्षम हानिकारक गतिविधियों का आकलन किया जाता है। उन गतिविधियों का विशेष ध्यान रखा जाता है जिनके द्वारा नुकसान की सम्भावना सर्वाधिक होती है।

समुद्री क्षेत्रों में पायी जाने वाली उक्त गतिविधियों में

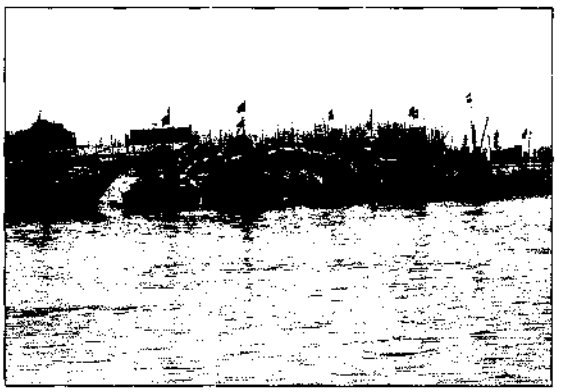

मात्स्यिकी

प्रमुख हैं - बन्दरगाहों का विकास, नौवहन हेतु तलकर्षण, औद्योगिक घरेलु स्रोतों एवं नगरपालिकाओं द्वारा मलजल का प्रवाह, तटवर्ती निर्माण कार्य, टूरिजम-पर्यटन तथा मनोरंजनात्मक गतिविधियाँ, नौवहन, वानिकी, मात्स्यिकी जलकृषि विभिन्न कृषि रसायनों का उपयोग करके की जानेवाली कृषि, खनिज दोहन एवं उर्जा उत्पादन।

मौसम तथा जलीय चक्रों से सम्बन्धित सूचनाओं का भी इन निर्धारक अध्ययनों में एक महत्वपूर्ण स्थान होता है। भौगोलिक सीमाओं के परे जलीय प्रवाहों, जलीय तंत्र में समाहित कणों का प्रवाह एवं नियति, विशिष्ट मानवजनित गतिविधियाँ जो जलीय प्रवाहों को इस प्रकार परिवर्तित कर सकें कि जलकणों तक का प्रवाह बदल जाये आदि मुख्यतः विस्तार से निरीक्षित की जाती है।

प्राकृतिक रूप में उपलब्ध तत्वों की सांद्रता तथा वितरण का भी अध्ययन विस्तार से किया जाता है क्योंकि ये तत्व सामुद्रिक जीव जन्तुओं तथा पौधों के विकास, संघटन तथा धारणीयता को प्रभावित करते हैं। समुद्री पानी

में धुली प्राणवायु तथा नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं सिलिका इत्यादि का प्राकृतिक एवं मानवनिर्मित सभी प्रकार के स्रोतों से क्षेत्र में उपस्थित होने का लेखा जोखा इस तरह बनाया जाता है कि वायुमण्डलीय माध्यम से प्राप्तियों को भी जोड़ लिया जाता है।

निर्धारक प्रतिवेदनों का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा प्राकृतिक, संलिष्ट या कृत्रिम पदार्थों से सम्बन्धित आंकड़े होते है क्योंकि इनके द्वारा सीधे-साधे अथवा परोक्ष रूप से मानव अथवा समुद्री जीव अन्तुओं को हानि की सम्भावना रहती है। इन सभी आंकडों को एक वृहद् निर्धारण अध्ययन तथा अधुलनशील रसायनों के अतिरिक्त खाये जा सकने योग्य समुद्री जीवों के ऊतकों, खाध जाल के विभिन्न स्तरों में उपस्थित प्रजातियों तथा तलछट में उपस्थित छोटे-छोटे कणों तक को निर्धारण अध्ययन में समाहित किया जाता है।

निर्धारण प्रक्रिया का अगला पड़ाव होता है भौतिक समुद्रविज्ञान के परिप्रेक्ष्य में विभिन्न रसायनों का परिवहन, चक्रीकरण एवं नियति। तलकर्षण, जलीय प्रवाह एवं खनिज दोहन जैसी प्रक्रियाओं के अतिरिक्त वायुमंडलीय घटकों की भी समीक्षा की जाती है जिससे कि क्षेत्र में होने वाले तत्वों के वितरण के प्रभाव की जानकारी हो सके। क्षेत्र की रासायनिक संघटना में हुये परिवर्तनों को समझने के लिए वह आवश्यक होता है कि विशिष्ट तत्वों की आवा-जाही, मानवीय तथा प्राकृतिक प्रक्रियाओं का सही-सही आकलन किया जाये।

क्षेत्र की जैविकी एवं पारिस्थितिकी की एक व्यापक सूची बनाना भी बहुत जरूरी होता है। विभिन्न समुदायों एवं प्रजातियों के अतिरिक्त उनके प्राकृतिक वास, शिकार एवं शिकारी सम्बधों, विपुलता के पैमानों, सूचक एवं मूल प्रजातियों की उपस्थिति इत्यादि सभी पहलुओं पर ध्यान दिया जाता है। सूची का निर्माण इस प्रकार से होता है कि दोहित किये जाने वाले सभी जीवन्त समुद्री संसाधनों जैसे मछली, झींगा, समुद्री घास इत्यादि की पहचान हो जाये। जहाँ तक सम्भव होता है इन संसाधनों की आबादी का परिमाण, उनके अण्डे देने के स्थानों, भोजन के लिए चुनी जगहों तथा उन प्रजातियों व संसाधनों का विवरण जिन्हे भोज्य बनाकर यह संसाधन वृद्धि करते है आदि सभी जानकारियाँ सूची में भरी जाती हैं।

दोहन योग्य जातियों के अस्थायी तथा स्थानिक उतार चढाव की सूचना भी इकट्ठी की जाती है। इन सूचनाओं को विशेष प्रजातियों व विशेष परिस्थितिकी के परिप्रेक्ष्य में उनकी आबादी तथा विचलन की कसौटी पर परख कर प्राकृतिक अथवा मानवीय कारणों में वर्गीकृत करके रखा जाता है। ऐसा करते समय इस बात का भी ध्यान रखा जाता है कि परिलक्षित उतार चढाव कहीं प्रजाति अथवा वास के प्रतिसंवेदन अथवा किसी रोग या विषाक्तता के कारण तो नहीं है। यह सभी सूचनाये या तो शोध कार्य अथवा द्वितीयक आंकडों के स्रोत से प्राप्त की जाती है।

उक्त वर्णित सोपानों के माध्यम से जब विहंगम आकृति का निर्माण हो जाता है तो पर्यावरण एवं प्रमुख प्राकृतिक वासों में हो रहे परिवर्तनों एवं उनके कारणों की व्याख्या की जाती है। इन परिवर्तनों को किसी विशिष्ट क्रिया के साथ जोडने का प्रयास किया जाता है जैसे कि मात्स्यिकी की तकनीक, तटवर्तीय अन्तरस्थलीय विकास, मैंग्रोव, कोरल अथवा मृदा तटों का क्षरण इत्यादि।

समुद्र तथा मानवीय जीवन एवं स्वास्थ्य पर प्रदूषण के कारण हो रहे दुष्प्रभावों का आकलन भी किया जाता है। इसमें घरेलू एवं औद्योगिक कारणों को वर्गीकृत करने के उपरान्त दोहित तथा अदोहित प्रजातियों के ऊतको में प्रदूषकों की मात्रा नापी जाती है। जब किसी भी गतिविधि के पर्यावरणीय महत्व के बारे में संशय होता है तो जोखिम निर्धारण का कार्य किया जाता है। समुद्री जीवों के ऊतको में अवस्थित रसायनों, सूक्ष्म जीवियों तथा विषाक्त शैवालों के कारण हो सकने वाले प्रभावों का मानव स्वास्थ्य हेतु जोखिम निर्धारण किया जाता है।

इस प्रकार पर्यावरणीय प्रभाव निर्धारण हेतु विभिन्न वैज्ञानिक गतिविधियों का क्रमबध्द रूप में इस प्रकार समायोजन किया जाता है जिससे कि पर्यावरण में हो चुके अथवा हो

रहे नुकसान को रोकने के लिये समस्त आवश्यक कदम उठाये जा सकें। यह अध्ययन वैज्ञानिक शोधन एवं विश्लेषण में मौजूद रिक्त स्थानों को भी उजागर करता है तथा क्षेत्रीय परिस्थितियों का समाकलन अत्यंत प्रभावशाली ढंग से करके पर्यावरणीय संरक्षण हेतु उठाये जा रहे कदमों की समीक्षा प्रस्तुत करता है।

परिस्थिति सुधारने के लिये उठाये जाने वाले उपायों के विवरण के अलावा उक्त तरीका हमें यह भी बोध कराता है कि भविष्य में अगले निर्धारण की आवश्यकता कब होगी।

अन्त में हमें यह समझना आवश्यक है कि यद्यपि कि पर्यावरणीय प्रभाव निर्धारण आज संसाधन प्रबन्धन प्रक्रिया का अविभाज्य अंग है परन्तु इसकी भी अपनी निश्चित सीमायें है। पर्यावरण में हो सकने वाले किसी भी परिवर्तन की भविष्यवाणी में थोडी सी अनिश्चितता तो समाहित रहेगी ही। वैज्ञानिकों के सम्मुख महत्वपूर्ण चुनौती इसी अनिश्चितता की मात्रा को कम करना है। इस कार्य के सम्पादन में प्राप्त किये जाने वाले आंकड़ो को सही प्रकार से इकठ्ठा करके उनमें अन्तरनिहित अनिश्चितताओं को यथासंभव कम करने के उपरांत परिणाम एवं निष्कर्ष प्रदान किये जाते है। पर्यावरणीय प्रभाव निर्धारण हेतु केन्द्रीय समुद्री मात्स्यिकी अनुसंधान संस्थान का मात्स्यिकी पर्यावरण और प्रबन्धन प्रभाग सलाहकार सेवायें उपलब्ध कराता है तथा प्रभाग में इस कार्य के सम्पादन हेतु आवश्यक सुविधायें तथा योग्य कर्मचारी विद्यमान हैं। ●

लक्षद्वीप की समुद्री अलंकार मछली संपदाएं

सी एम एफ आर आइ विशेष प्रकाशन सं. 72, मार्च 2002

आइ एस एस एन : 0972-2351

वी. श्रीरामचंद्र मूर्ति

लक्षद्वीप में किए गए सर्वेक्षण के आधार पर वहाँ के प्रमुख अलंकार मछलियों की विभिन्न जातियों के जीवविज्ञान और स्टॉक निर्धारण के आंकडे और सूचना सम्मिलित करके तैयार की गई भारत की ही पहली पुस्तक है । इस में लगभग 100 जाति मछलियों के रंगीन फोटोचित्र दिए गए हैं । इसके अतिरिक्त द्वीप की प्रमुख जातियों की विभिन्न कुटुम्बों और जातियों की सापेक्षिक प्रचुरता, लंबाई आंकडा और वृद्धि का कर्व रंगीन लेखाचित्रों के साथ दिया गया है । पुस्तक में 165 जातियों के आकार, पकड और लक्षद्वीप में अलंकार मछली की मात्स्यिकी तथा प्रबंधन विकसित करने के लिए आवश्यक सुझाव दिया गया है । अनुसंधानकर्ताओं, नीति पालकों, मात्स्यिकी विकास संगठनों, निर्यातकों, आयातकों, अध्यापकों और छात्रों को संदर्भ लेने के लिए यह प्रकाशन अत्यंत सहायक निकलेगा।

यह पुस्तक 1/4 क्राउन आकार, 134 पृष्ठों, निर्यात आर्ट पेपर में बहुरंगों में मुद्रित, उत्कृष्ट बाइन्डिंङ और लामिनेटेड आवरण की है जिसका मूल्य : 600/- रुपए है ।